पावागिरि सिद्धक्षेत्र

का

इतिहास

श्री प्रेमचन्द जैन 'प्रेम'

श्री पावागिरि सिद्धक्षेत्र

का

इतिहास

लेखक : श्री प्रेमचन्द जैन 'प्रेम'

संपादक : श्री महेन्द्रकुमार

प्रकाशक

श्री दि. जैन सिद्धक्षेत्र पावागिरी संरक्षिणी कमेटी,

पो. ऊन (निमाड़) म. प्र.

प्रकाशक :
मंत्री, श्री दि. जैन सिद्धक्षेत्र पावागिरी संरक्षिणी कमेटी,
पो. ऊन (निमाड़) म. प्र.

तृतीय संस्करण (परिवर्धित एवं संशोधित)
प्रतियां १५००
जनवरी १९६०
मूल्य : पचहत्तर नये पैसे मात्र

मुद्रक :
भारत प्रिन्टिंग प्रेस,
५, महात्मा गांधी रोड,
गली नं. १,
इन्दौर शहर (म. प्र.)

प्रकाशकीय

पावागिरि सिद्धक्षेत्र के इतिहास का तृतीय संस्करण प्रकाशित करते हुए हमें हर्ष है। यद्यपि इस संस्करण के प्रकाशन में आवश्यकता से अधिक विलम्ब हुआ। कृपालु पाठक क्षमा करेंगे।

प्रस्तुत पुस्तक के पिछले संस्करणों के मुकाबले इसमें वर्तमान परिस्थितिनुसार आवश्यक परिवर्तन एवं परिवर्द्धन कर दिया गया है। इसके लिये हम लेखक के अनुज श्री महेन्द्रकुमार के ऋणी हैं।

इस बार पुस्तक की सफाई - छपाई इत्यादि पर विशेष ध्यान दिया गया है और सामग्री पहले की अपेक्षा कुछ बड़े टाइप में मुद्रित की गई है ताकि साधारण पढ़े लिखे भाई-बहन को भी वाचन में सुविधा हो। आशा है पुस्तक के अधिकाधिक प्रचार–प्रसार द्वारा लेखक के उद्देश्य की पूर्ति होगी।

यह तो हुआ पुस्तक के सम्बन्ध में।

अब तीर्थराज के सम्बन्ध में नम्र निवेदन यह है कि नये मन्दिरों, देवालयों और स्तूपों के निर्माण की अपेक्षा प्राथमिकता प्राचीन-देवालयों, मन्दिरों तथा स्तूपों की जीर्ण–शीर्ण इमारतों के नव-संस्करण को दी जानी चाहिए। क्योंकि ये ही हमारी धार्मिक प्रेरणा और विद्या के केन्द्र रहे हैं।

प्रत्येक तीर्थप्रेमी भाई और बहन का कर्त्तव्य है कि अपनी सभ्यता, संस्कृति और कला के प्रतीक इन तीर्थ-स्थलों के संरक्षण के लिये दान स्वरूप धनराशि भेजकर पुण्य प्राप्ति के भागीदार बनें।

प्रेमी पाठकों के हाथों "पावागिरी सिद्धक्षेत्र के इतिहास" के रूप में 'प्रेम' की यह पुस्तक जिन उदार दाताओं के आर्थिक मदद के कारण पहुँची है, उन्हें हम अपनी ओर से धन्यवाद दिये बगैर नहीं रह सकते। अतः उन्हें अनेकानेक धन्यवाद है। इति शुभम्।

मंत्री

अनुक्रमणिका

पहाड़ स्थित शान्तिनाथ मंदिर

प्राक्कथन

मैंने श्री प्रेमचन्द जैन द्वारा लिखित पावागिरि (ऊन) सिद्धक्षेत्र के संक्षिप्त इतिहास को अत्यन्त ध्यान से पढ़ा है । निस्सन्देह पुस्तक उपयोगी है और तीर्थ-यात्रियों की एक बहुत बड़ी आवश्यकता को पूरा करती है । पुस्तक की उपयोगिता इसलिये और भी स्पष्ट है कि यह इसका तृतीय उपसंस्करण है और इसे लेखक ने फिर से संवार लिया है । तीर्थयात्रियों और प्रवासियों के मार्ग-दर्शन के निमित्त उक्त इतिहास का प्रकाशन अपरिहार्य जैसा ही है ।

सारी पुस्तक मोटे तौर पर ३ भागों में विभक्त है । पहिले भाग में लेखक ने ऊन की प्राचीनता पर आशातीत यथासम्भव प्रकाश डाला है और उपलब्ध तथ्यों के आधार पर उसे प्रमाणित किया है । जैन और जैनेतर साक्ष्यों ने पुस्तक की प्रामाणिकता को निस्सन्देह बहुत अधिक बढ़ा दिया है । पौराणिक पुरातनता की दृष्टि से लेखक ने काफी श्रम किया है और सशक्त तर्कों के संकलन में उसे अत्यधिक सफलता मिली है । इतिहास और पुरातत्व का पक्ष अभी सूना-सूना-सा है । किन्तु आशा की जाना चाहिए कि उक्त दोनों दृष्टियों से भी ऊन का व्यापक अनुसंधान होगा और इस तरह के निष्कर्ष जल्दी ही सामने आ सकेंगे । जहां तक जैन - स्थापत्य का सम्बन्ध है विद्वान लेखक ने उसे जहां - तक छुआ है वस्तुतः वह एक अलग मौलिक ग्रन्थ का विषय ही है । दूसरे भाग में लेखक ने सिद्धक्षेत्र के सन्धान और जीर्णोद्धार पर विस्तृत प्रकाश डाला है और अन्तिम भाग तथा परिशिष्ट में क्षेत्र की वर्तमान रीति-नीति और स्थिति पर विहङ्गम दृष्टि से विचार किया है । जहां तक

क्षेत्र की व्यवस्था का प्रश्न है, वह प्रथम श्रेणी की पूर्णतः निरापद और आरामदेह है।

कुल मिलाकर पुस्तक अत्यधिक उपयोगी है और उसका प्रकाशन सामयिक है। लेखक और प्रकाशक दोनों ही साधुवाद के पात्र हैं।

मुझे पूरा विश्वास है कि यह पुस्तक खूब समादृत होगी और नीमाड़ में इसके अनुकरण पर अन्य क्षेत्र भी इसी प्रकार के परिचय-ग्रन्थ प्रकाशित करेंगे।

नेमीचन्द जैन

अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग

स्नातक महाविद्यालय, बड़वानी

दि. १५ नवम्बर, ५६

दो शब्द

श्री सिद्धक्षेत्र पावागिरि (ऊन) का इतिहास लिखकर श्री प्रेमचन्दजी जैन "प्रेम" लोनारा निवासी ने एक बड़े अभाव की पूर्ति की है।

ऊन में उपलब्ध पुरातत्व सामग्री के आधार पर लेखक ने जो खोजपूर्ण संग्रह किया है उसको देखते हुए अभी भी इस क्षेत्र सम्बन्धी ऐतिहासिक प्रमाण की अपर्याप्तता का अनुभव होता है। हम लोगों को अपने प्राचीन इतिहास के अन्वेषण के प्रति उदासीनता एवं उपेक्षा ने अनेक तीर्थों एवं प्राचीन स्थानों को प्रकाश में लाने व प्रमाणित करने से वंचित कर रखा है।

तीर्थक्षेत्र मूर्तिशिल्प और स्थापत्य कला के इतिहास की जानकारी के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। जहां तीर्थङ्कर आदि महान पुरुषों ने सांसारिक वैभव का परित्याग कर आत्मसाधन द्वारा क्रोधादि अन्तरंग शत्रुओं का संहार किया, वह पवित्रस्थल तीर्थ कहलाता है। उससे आत्म-जागृति के पथ में प्रगति करने के लिये पर्याप्त प्रेरणा मिलती है। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव रूप वातावरण का चित्त पर प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। स्थल विशेष पूर्व घटनाओं का चित्र उपस्थित कर देता है।

हमारे यहां तीर्थक्षेत्र तीर्थङ्करों की निर्वाण भूमि और अन्य महा-पुरुषों की निर्वाण भूमि के भेद से दो प्रकार के हैं। इन्हें सिद्धक्षेत्र कहते हैं। इनके सिवाय किसी प्रतिमा या देवताविशेष के अतिशय के कारण या मंदिरों व मूर्तियों की अधिकता से अतिशय क्षेत्र माने जाते हैं। तीर्थङ्करों के कल्याणक स्थान भी तीर्थ कहे जाते हैं।

यह पावागिरि क्षेत्र, सिद्धक्षेत्र है क्योंकि यहां से सुवर्णभद्र आदि मुनिराज मुक्ति गये हैं। पावागिरी क्षेत्र पर खड़े होकर हम उस क्षेत्र के

ऊपर लोकांत (तनुवा तवलय) में विराजमान शुद्ध सिद्ध अवस्था को प्राप्त सुवर्णभद्रादि की वन्दना कर अपनी आत्मा में विशेष बल उत्पन्न करते हैं।

वास्तव में तीर्थ वन्दना सम्यग्दर्शन को पुष्ट करती है। समाधि के लिये ऐसे ही स्थान उपयुक्त रहते हैं।

पावागिरी तीर्थ के अन्वेषक स्वर्गीय तीर्थभक्त सेठ हरसुखजी साहब हमसे कहा करते थे कि पावागिरि और बड़वानी के मध्य के क्षेत्र में एक और तीर्थ है जहां विद्वानों के साथ मैं जाना चाहता हूँ। निर्वाण–कांड के पाठक्रम में भी ऐसे तीर्थ का होना बताया है। पर मैं पहिले लिख चुका हूँ कि हम लोगों का इस ओर ध्यान नहीं, न हम इस खोज के पुण्य कार्य में पैसा देना चाहते। प्रतिवर्ष आठ दस, पंच कल्याणक तक हमारे यहां हो जाते हैं, जिनमें लाखों रुपये खर्च होते हैं इनमें कहीं बिना आवश्यकता के भी ये महोत्सव कराये जाते हैं, पर पुरातत्व की खोज, साहित्य प्रचार, साधर्मी जनों की सहायता और धर्म शिक्षण के कार्यों में व्यय करने के अवसरों को हम टाल देते हैं।

मैं प्रस्तुत पावागिरि इतिहास के लेखक द्वारा किये गये प्रयत्न की हृदय से सराहना करता हूँ और पावागिरी सिद्धक्षेत्र पर वन्दनार्थ आने वाले धर्मात्मा बन्धुओं से निवेदन करता हूँ कि वे वहां पहुँचकर जैन धर्म को अन्तरंग और बहिरंग प्रभावना को क्रियात्मक रूप देने की दृढ़ प्रतिज्ञा करके ही घर लौटें, तभी उनकी तीर्थयात्रा सफल मानी जायगी।

नाथूलाल शास्त्री
प्रधानाध्यापक,
श्री सर हुकुमचन्द दि. जैन संस्कृत
महाविद्यालय, इन्दौर.

निवेदन

अपनी सभ्यता के अत्यन्त प्राचीनकाल से भारतवर्ष धर्म-प्रधान देश रहा है । यहां के विभिन्न विभागों के नृपतिगण तथा धनाढ्य व्यक्ति धार्मिक कार्यों में अपने द्रव्य के सद्व्यय से सदैव पुण्यार्जन मानते रहे हैं । भारतवर्ष में ओर-छोर तक पाये जाने वाले जैन एवं अजैन मंदिर लोगों की धार्मिक प्रवृत्ति के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं ।

धार्मिक प्रवृत्ति के परिचायक होने के अतिरिक्त भारत के प्राचीन एवं मध्यकालीन देवालयों से भिन्न-भिन्न प्रान्तों की कालानुसार वास्तु-कला का भी अच्छा परिचय मिलता है ।

नीमाड़ में प्राचीनकाल में श्री सोनाचार्य, अमितगति सोमदेव, श्री मानतुंगाचार्य, प्रभाचन्द्राचार्य, श्री नयन्दानन्दी आदि दिग्गज विद्वानों ने ग्रंथ रचनाए की हैं । इस बात की सत्यता के कई प्रमाण अब भी उपलब्ध हो रहे हैं । जैसे जबकि सर्वज्ञ अवस्था में कैवल्य - प्राप्त श्री ऋषभदेव ने सारे आर्यखण्ड में विहार किया था, इस धर्म-प्रचार के सिलसिले में वे नीमाड़ भी पधारे थे । यह अनुमान गलत नहीं कि प्राचीन युग में नीमाड़ में जैन धर्म का बहुत ही जोर शोर रहा होगा ।

जैन धर्मशास्त्र कहते हैं कि ऋषभस्वामी ने काशी, कौशल, अंग, बंग, विदर्भ, मालवा और पांचाल आदि देशों में बिहार कर जनता को धर्म प्रेरणा दी थी ।[1]

श्री ऋषभदेव के पश्चात् अन्य तीर्थंकरों ने भी अपने चरण-कमलों से निमाड़ की भूमि को पवित्र किया था । बाइसवें तीर्थंकर श्री

---

1 हरिवंश पुराण सर्ग १२,

नेमिनाथ स्वामी सर्वज्ञावस्था में उपदेश देते हुए समवशरण सहित महिष्मती नगरी पधारे थे।२ हरिबंश भूषण तीसरे तीर्थङ्कर मुनिसुव्रत स्वामी के नाती वीर 'ऐले' ने महिष्मती नगरी का निर्माण३ कर विन्ध्य शैल के पृष्ठ भाग में चेदिराष्ट्र की स्थापना की थी जो खूब फला-फूला एवं इस राष्ट्र से जैन धर्म का विशेष उत्थान हुआ। इतना ही नहीं नीमाड के सिद्धक्षेत्र में इस बात के प्रमाण भी हैं कि प्राचीनकाल में यहां जैन धर्म का प्राबल्य रहा है। रेवानदी के तट से रावण के लड़के और पांच करोड़ पचास लाख मुनि मोक्ष गये हैं।४ नर्मदा से पश्चिम की तरफ सिद्धवरकूट से दो चक्रवर्ती, दस कामदेव आदि साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष को गये हैं।५ बड़वानी से इन्द्रजीत और कुम्भ कर्ण मुनि मोक्ष को गये हैं ६ पावागिरि से सुवर्णभद्र आदि चार मुनि मोक्ष सिधारे हैं।७ इस समय इन सिद्धक्षेत्रों के आसपास तालनपुर, सुसारी, कुक्षी, मनावर, निसरपुर, खंडवा, बड़वाहा, सनावद, लोनारा, महेश्वर आदि स्थानों में जैनबन्धु अब भी पर्याप्त संख्या में निवास करते हैं और यहां जैन मन्दिर भी हैं। कुछ साल पूर्व ऊन के इन प्राचीन मन्दिरों का धार्मिक दृष्टी से कोई महत्व नहीं था परन्तु सिद्धक्षेत्र की स्थापना और मन्दिरों की प्रतिष्ठा के बाद पावागिरि सिद्धक्षेत्र (ग्राम ऊन) का बहुत बड़ा महत्व समझा जाने लगा। अब तो भारत सरकार पुरातत्व संरक्षण योजना के अन्तर्गत कुछ जैन और जैनोतर मन्दिरों के भग्नावशेषों की देखभाल और मरम्मत कार्य कर रही है।

केवल प्राचीन, दर्शनीय और धार्मिक वस्तु के नाते अन्य लोगों की भांति जैनभाई भी अनेक मन्दिरों और वहां की मूर्तियों के निरीक्षण

२हरिवंश पुराण सर्ग ५८, ३ हरिवंश पुराण सर्ग १७, ४ निर्वाण कांड भाषा १०, ५ निर्वाणकांड भाषा ११, ६ निर्वाण कांड भाषा १२, ७ निर्वाण कांड भाषा १३

ग्रौर दर्शन करने ग्राते रहते थे। ऊन के जीर्णोद्धार या संरक्षण ग्रादि का भाव किसी भी जैन भाई के हृदय मे नहीं उठा। इसमें संदेह नहीं कि उनकी यह प्राचीन विभूतियां बहुत ग्रधिक मूल्य रखती हैं ग्रौर संरक्षण प्राप्त करने की सर्वथा ग्रधिकारिणी है।

यह स्वयं सिद्ध है कि जिसको यश मिलने वाला होता है उसको यश जरूर मिलता है। तीर्थभक्त स्व० श्री हरसुखजी को यह यश मिलने वाला था, सो उन्हींकी खोज ग्रौर सतत परिश्रम से हमारा प्राचीन पवित्र पावागिरि सिद्धक्षेत्र प्राप्त हो गया।

गुरुजनों ग्रौर स्नेही मित्रों की प्रेरणा से "प्रेम" वाचनालय का यह पांचवा पुष्प सुहृदय पाठकों के हाथों में पहुंच रहा है। मेरे ग्रनुज श्री महेन्द्रकुमार ने यथेष्ठ सम्पादन कर इस तृतीय संस्करण में काल-क्रमानुसार कुछ संशोधन तथा परिवर्द्धन कर दिये हैं। शासकीय महा-विद्यालय बड़वानी के प्राध्यापक सुहृदय स्नेही भाई श्री नेमीचन्दजी जैन ने ग्रपने लघु प्राक्कथन में सारी पुस्तक सामग्री 'एक नजर में' प्रस्तुत कर दी है। उनके इस उपकार का मैं ऋणी हूँ।

श्री सर हुकुमचन्द दि० जैन संस्कृत महाविद्यालय, इन्दौर के मुख्याध्यापक पं. श्री नाथूलालजी जैन (शास्त्री) ने भूमिका के रूप में 'दो शब्द' लिखकर निसंदेह पुस्तक की उपयोगिता ग्रौर महत्व को बढ़ाया है। उनकी इस कृपा का प्रतिफल उन्हें मैं कैसे लौटाऊं ?

उन दानदाताग्रों का उपकार न मानना भी एक बड़ी भूल होगी, जिनकी उदारता से ही इस पुस्तक के तृतीय-संस्करण का प्रकाशन सम्भव हुग्रा है।

उपरोक्त तीनों सज्जनों सहित वे सभी मेरे हार्दिक धन्यवाद ग्रौर बधाई के पात्र हैं।

अन्त में इतना ही कि मुझे अपनी योग्यता पर तो विश्वास नहीं है कि यह त्रुटिपूर्ण 'न कुछ' भेंट जैन समाज को अंगीकृत होगी, क्योंकि मैं न तो कोई प्रतिभा सम्पन्न कवि ही हूँ और न साहित्य का मर्मज्ञ ही। इतिहासकार तो हूं ही नहीं। पुरातत्व सम्बन्धी शोध पुरातत्ववेत्ता करेंगे परन्तु पावागिरी सिद्धक्षेत्र कैसे प्रकाश में आया इसकी जानकारी एवं दिग्दर्शन भर करा देना इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य है।

'प्रेम'
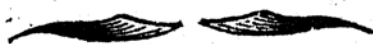
श्रीमान राज्य-रत्न, जैन दिवाकर स्व० सर सेठ सा० हुकमचंदजी इंदौर

आपके असीम प्रयत्न से ही यह क्षैत्र प्राप्त हुआ व मंदिर की नींव आपके कर कमलों द्वारा ही रखी गई। आप इस क्षैत्र के लिये तन, मन और धन से काम करते थे। आप इस क्षैत्र के प्राणान्त सभापति रहे।

श्री पावागिरि सिद्धक्षेत्र का इतिहास

—❀—

सुवरन भद्र आदि मुनि चार।
पावागिरि वर शिखर मंझार।
चेलना नदी तीर के पास ।
मुक्ति गये वन्दों नित तास ॥

पावागिरि वर सिहरे सुवण्णभद्दाइ मुण्विरा चिवरो ।
चलणाणइ तडग्गेण्व्विाण ॥१३॥ निर्वाण काण्ड गाथा।

बीस वर्ष पहले की बात है। श्रीमान् तीर्थभक्त सेठ सा० हरसुखजी सुसारी कारणवश महेश्वर गये थे। वहां आपको ग्राम टेमला का एक जैन भाई मिला। जैन भाई ने ऊन का इतिहास बताते हुए कहा कि यहां प्राचीन काल में ९९ मंदिर, ९९ बावड़ी तथा ९९ तालाब थे। अब वहां पर कुछ चिन्ह पाये जाते हैं। निःसन्देह यह वही पावागिरि सिद्धक्षेत्र होना चाहिए जिसका कि निर्वाणकांड गाथा में बावनगजा तथा सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्रों के साथ उल्लेख है।

इन बातों पर सेठ साहब को एकाएक विश्वास नहीं हो सका। किन्तु सारा इतिहास सुनने पर आपका धार्मिक हृदय

उत्कंठित हो उठा और आप ऊन आये। सब मन्दिर देखे और उनका दर्शन किया । आपके मन में यह श्रद्धा और विश्वास बैठ गया कि यहां कोई सिद्धक्षेत्र ही होना चाहिये, किन्तु आप उस समय दर्शन मात्र करके वापस लौट गये । इसके बाद फिर और आये परन्तु तीसरी बार आप स्व. उदासीन पंडित-प्रवर श्री पन्नालालजी गोधा आदि प्रमुख व्यक्तियों को साथ लेकर पधारे। पहाड़-मन्दिर पर भी गये, प्रक्षाल पूजन आदि किया और टेमला के जैन भाई ने ऊन विषयक जो वृतान्त दिया था उसकी चर्चा भी इन लोगों से की। किन्तु इस ओर किसी का ध्यान नहीं गया। ग्राम ऊन में किसी जैन परिवार के न होने से मूर्तियां बगैर प्रक्षाल-पूजन की रहती हैं। उन्हें यह जानकर अच्छा नहीं लगा। इस उद्देश्य से मूर्तियों को इन्दौर ले जाने का सोचा गया परन्तु टूट–फूट के डर से वह विचार छोड़ देना पड़ा और इस तरह बिना कोई निर्णय लिये सब अपने–अपने घर लौट गये । केवल दर्शन की प्रेरणा और उत्सुकता से जैनी भाई आते जाते रहे ।

बीस वर्षों बाद श्रीमान् सेठ मोतीलालजी बड़वानी का कारणवश ऊन शुभागमन हुआ। आपने भी मन्दिरों का दर्शन व निरीक्षण किया। सड़क के आसपास यत्र–तत्र टूटी–फूटी मूर्तियां बिखरी पड़ी थी। यह देख आपके मन को क्लेश हुआ किन्तु कुछ उपाय न देखकर आप भी लौट गये ।

उन दिनों सागर निवासी पुजारी श्री चेतनलालजी, अंजड़ के जैन मन्दिर में प्रक्षाल–पूजन पर रखे गये थे। पर कारण-

वश वहां से आपको छोड़ना पड़ा। तब आप सेठ सा. मोती-लालजी के पास बड़वानी आये और अन्यत्र कहीं नौकरी देने की मांग की। सेठ साहब के सामने ऊन की स्थिति प्रतिमूर्त हो उठी और उन्होंने अपने काका हरसुखजी की सलाह से पुजारी चेतनलाल को ऊन भेजने का निश्चय किया। पुजारी चेतनलाल ऊन आये और पहाड़ – मन्दिर की सफाई तथा प्रक्षाल–पूजन नित्य प्रति होने लगा।

पुजारी को स्वप्न

जेष्ठ सुदी १०, सं. १९९१ को पुजारी चेतनलाल प्रक्षाल-पूजन के लिये ऊन आये और कुछ ही समय बीता था कि उन्हें आषाढ़ बदी ८ सं. १९९१ की रात्रि के मध्यान्तर में एक रोमांचकारी स्वप्न आया। स्वप्नावस्था में उन्होंने सुना— "यहां जिनेन्द्र भगवान की मूर्तियां हैं तुम उनको खोदो तो दर्शन होगा।"

प्रातःकाल हुआ। नित्य की भांति पहाड़ के मन्दिर का पूजन कर आप जब वापस लौटे तो उन्हें रात्रि के स्वप्न की याद आई। उसके अनुसार जहां जैन मन्दिरों के चिन्ह थे वहां आप सड़क की उत्तरी बाजू पर आये और इधर-उधर मंदिरों के चिन्ह गौर से देखने लगे। वहां ऊंचा टीला-सा दिखाई दिया। उसके ऊपर कुछ मिट्टी पड़ी थी - उसे अपने हाथों से इधर उधर हटा ही पाये थे कि उन्हें मूर्ति का शिरोभाग दिखाई दिया। आपको विश्वास बंधा और स्वप्न के मूर्तिमन्त होने की आशा होने लगी। अतः कुछ मजदूरों की सहायता

से उस स्थान को खुदवाया तो सर्व प्रथम भगवान महावीर स्वामी की सुन्दर प्रतिमा उत्खलित हुई। तत्पश्चात चरण–पादुका तथा अन्य चार मूर्तियां और निकलीं । मूर्तियों को निकालकर आप जहां रहते थे उस कुटिया में ही उन्हें रख दिया और प्रदपूजन करने लगे । इन प्रतिमाओं के उद्घाटित होने के समाचार लोनारा तथा सुसारी भिजवाये गये। लोनारा से सेठ चम्पालालजी धन्नालालजी आदि चार पांच व्यक्ति तथा सुसारी से सेठ हरसुखजी अपने इष्ट बन्धुओं के साथ ऊन पधारे। बड़वानी से पधारने वाले प्रमुख लोगों में सेठ हेमचन्दजी तथा सेठ कस्तूरचन्दजी थे । सबने खुदाई में प्राप्त प्रतिमा का भक्तिभाव पूर्वक प्रक्षाल – पूजन किया तथा बड़ी प्रसन्नता प्रकट की।

पुजारी के स्वप्न और भगवान महावीर स्वामी की मूर्ति के खुदाई में प्राप्त होने के शुभ समाचार सुनकर जो सज्जन वहां इकट्ठे हुए थे, उन सबको लगा कि यहां चरण – चिन्ह निकले हैं इससे स्पष्ट है कि यह कोई सिद्धक्षेत्र रहा होगा । सेठ हरसुखजी ने महेश्वर में टेमला के उस जैन भाई से ऊन के विषय में सुना वृतान्त कह सुनाया । सबको विश्वास होने लगा कि यह वही पावन पवित्र सिद्धत्रक्षेत्र पावागिरी ही है जिसका वर्णन निर्वाणकांड में पढ़ा करते हैं और परोक्ष रीति से पूजन भी किया करते थे। निर्वाणकांड के क्रमानुसार बावनगजा और सिद्धवरकूट के मध्य स्थित होने से इस मान्यता को और बल मिला। फिर भी पंड़ितों और अनुसंधान कर्ताओं द्वारा निश्चय कराने के लिये योग्य अवसर दिये गये।

निमाड़ में अपने ही गांव के पास सिद्धक्षेत्र के प्रकट होने की खुशी में लोनारा के सेठ श्री चम्पालालजी धन्नालालजी ने ५००)की भूमिक्रय करके यात्रियों को सुविधा की दृष्टि से एक धर्मशाला बनवाने का वचन दिया और एकत्रित समुदाय एक नई आशा और उमंग को लेकर लौट गया।

ऊन से लौटकर तीर्थराज पावागिरि के प्रकट होने के समाचार जब पत्रों में प्रकाशित किये गये तो सारे जैन समाज में हर्ष और उत्साह की एक नई लहर व्याप्त हो गई।

पंडितों का समर्थन और सिद्धक्षेत्र की घोषणा

सेठ हरसुखजी के प्रयत्नों से इन्दौर की विद्वद् मंडली ऊन आई। आप सबने भी मन्दिरों के चिन्ह देखे और वहाँ के निवासियों से पूछताछ कर जानकारी ली। श्रावण सुदी ६, सं. १९९१, ता. १६ अगस्त १९३४ ई. को इंदौर में तीर्थ-भक्त शिरोमणी, दानवीर, रायबहादुर, राज्य भूषण, रावराजा, राज्यरत्न, रईसौदल्ला, जैन सम्राट, स्व. सेठ साहब हुकमचंद जी के सभापतित्व में विद्वानों की एक बैठक हुई जिसमें इंदौर के अतिरिक्त निमाड़ क्षेत्र के कई जैन प्रमुखों ने भाग लिया। बैठक में भाग लेने वाले पंडित महानुभावों में महोपदेशक पं० कस्तूरचन्दजी, विद्या—वारिधि पं. खूबचन्दजी, सिद्धाँतशास्त्री पं. बन्शीधरजी, न्यायतीर्थ पं. जीवन्धरजी, उदासीन त्यागी पं. पन्नालालजी गोधा तथा पं. श्री विष्णुकुमारजी जैन शास्त्री प्रमुख थे। पंडित महानुभावों ने निर्वाणकांड (गाथा १३) का

भावार्थ अपने शब्दों में प्रकट करते हुए ऊन में पावागिरि सिद्धक्षेत्र होने की सम्भावना को बल पहुंचाया तथा उसकी धोषणा की।

निर्वाणकाण्ड (गाथा १३)

पावागिरि सिहरे, सुवण्य भद्दई मुणि चऊरे।
चेलनाणई तडग्गे णिव्वाण गयाण मोतेसिं॥

इसके अनुसार तथा यहां की चेलना नदी जिसको उन के वर्तमान निवासो चिरूढ़ नदी कहते हैं व सरकारी कागजों में चंदेरी है। चेलना का चेटक, चेटक का चिरट, चिरट का चिरूढ़ नाम अपभ्रंश होता गया हैं। वैसे ऊन प्राचीन काल में एक विशाल नगर होना चाहिए क्योंकि वहां के भग्नावशेषों को देखकर शंका का कोई कारण नहों उत्पन्न होता। निर्वाण कांड में निमाड़ स्थित सिद्धक्षेत्रों को वन्दना इस क्रम से की गई है।

रावण के सुत आदि कुमार, मुक्ति गये रेवा तट सार।
कोटि पंच अरु लाख पचास, ते वंदों धरि परम हुलास॥११॥
रेवा नदी सिद्धवर-कूट, पश्चिम दिशा देई जहं छूट।
द्वै चक्री दश काम कुमार, उठ कोडि वंदो भव पार॥१२॥
बड़वानी बड़नगर सुचंग, दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग।
इन्द्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण, ते वन्दों भव सागर तर्ण॥१३॥
सुवरणभद्र आदि मुनि चार, पावागिरिवर शिखर मंझार।
चेलना नदी तीर के पास, मुक्ति गये वन्दों नित तास॥१४॥

इस क्रम नियम से भी सिद्ध होता है कि पावागिरी सिद्धक्षेत्र बड़वानी के समीप है, परन्तु यहां शंका होती है कि निर्वाणकाण्ड में क्रम से वंदना के लिये कोई नियम का आधार व प्रमाण तो नहीं माना जा सकता। इसलिये यह द्रोणगिरी के समोप क्यों न माना जाय ? परन्तु द्रोणगिरी के समीप ऐसा कोई स्थान नहीं है तथापि निमाड़ के चारों सिद्धक्षेत्रों की वन्दना क्रम से ही की गई है। इसलिये यह मान लेना पड़ता है कि पावागिरी चूलगिरि के पास ही है। ऊन के अतिरिक्त बड़वानी (चूलगिरी) के समीप और कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां जैन तीर्थ होने का निश्चय हो सके। यह स्थान द्रोणगिरी के निकटस्थ नहीं है। इसकी सिद्धि के लिये निम्न प्रमाण ही उपलब्ध हो सका है। स्वर्गीय कवि जगत-रायजी कृत "बृहत् निर्वाण-विधान" में लिखा है कि—

वर नगर निकट उतंग परवत नाम पावागिरि परो।
ताके समीप सुनदी चेलना नाम तट ताको धरो॥

इससे पावागिरि का वरनगर के निकट होना सिद्ध होता है। किन्तु वर्तमान बड़नगर (वरनयर) के समोप कहीं चेलना नदी नहीं है इसलिये लगता है कि वरनगर वर्तमान बड़वानी का द्योतक है। ऐतदर्थ यह सिद्ध हुआ कि पावागिरि सिद्धक्षेत्र बड़वानी के समीप है और चेलना नदी के तट पर स्थित है। इस तरह हमारा यह पावन पवित्र सिद्धक्षेत्र नीमाड़ में जैन धर्म के गौरवपूर्ण अस्तित्व का अकाट्य प्रमाण है।

धर्मशाला की स्थापना और पावागिरि क्षेत्र (ऊन) पर अधिकार

लोनारा निवासी सेठ चम्पालाल धन्नालाल जी ने ऊन में धर्मशाला बनवाने का वचन दिया था । उसकी नींव मिती श्रावणवदी ४ सं. १९९१ को रखी गई और रु. २५००) की लागत से धर्मशाला का कार्य कोई माह भर में ही सम्पन्न हो गया ।

पावागिरि सिद्धक्षेत्र का उद्घाटन तो हुआ किन्तु राज्य की ओर से जैन समाज को वह प्राप्त नहीं हो सका । तदर्थ श्रीमान् सर सेठ साहब श्री हुकमचन्दजी ने तत्कालीन होल्कर रियासत के महाराजाधिराज श्रीमन्त यशवन्तराव होल्कर की सेवा में प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर पावागिरि सिद्धक्षेत्र जैनियों को दिये जाने के सम्बन्ध राजाज्ञा प्राप्त की । २९ अगस्त, ३५ को हुजूर श्री शंकर के जिस आदेश क्र, २९४ के अनुसार इस सिद्धक्षेत्र को दिगम्बर जैनियों को दिये जाने सम्बन्धी जो राजाज्ञा हुई उसकी अविकल प्रतिलिपि परिशिष्ठ १ में दी गई है । एतदर्थ जैन समाज तात्कालीन रियासत का ऋणी रहेगा ।

ऊन के प्रचीन स्मारक

ऊन का जो मध्यकालीन मन्दिर समूह हैं उसकी तक्षण-कला खुजराहों के लोक प्रसिद्ध मन्दिरों की पच्चीकारी से हलकी ही जान पड़ती है, 'किन्तु और सब तरह से खुजराहों के देवालयों से इनकी तुलना हो सकती है । सुप्रसिद्ध पुराविद्

श्रीमान् तीर्थ भक्त स्व. सेठ सा. घासीलालजी जैन
काला मल्हारगंज, इन्दौर

आपने जीर्णोद्धार में ५०००) दिया है ।
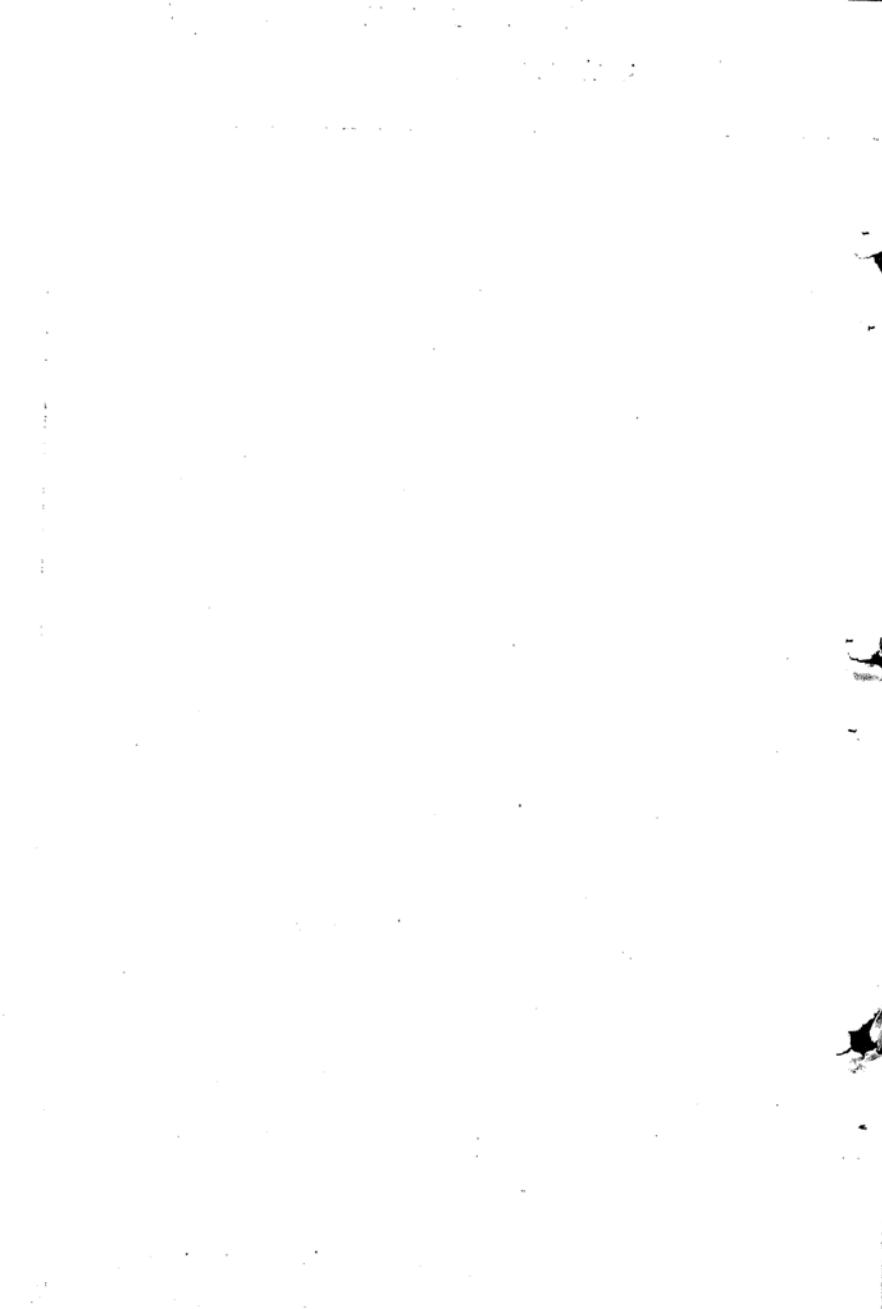
श्री स्व. राखालदासजी वन्धोपाध्याय के मतानुसार खुजराहों के पश्चात् मध्यभारत में ऊन के अलावा और कोई स्थान ऐसा नहीं है जहां इतने प्राचीन देवालय अब तक सुरक्षित अथवा अर्द्धरक्षित दशा में विद्यमान हों।

चौबारा डेरा क्र. १

सड़क से ग्राम की ओर का यह मन्दिर चौबारा डेरा के नाम से प्रसिद्ध है। यह मन्दिर सुविशाल एवं पच्चीकारी में सर्वोत्कृष्ट है। इसे पीछे से देखने पर इसकी अर्धभग्न दशा का पता चलता है। इस पूर्वाभिमुख मन्दिर के मध्य से सभा-मण्डप और पूर्व–दक्षिण एवं उत्तर में अर्ध-मण्डप है। मन्दिर के मण्डप और गर्भगृह में प्रवेश करते हुये उत्तरी दीवार पर दो छोटे छोटे लेख और एक सर्पबंध खुदा हुआ है। देवनागरी वर्णमाला के अक्षर और धातु रूप के प्रत्यक्ष एक सर्प के शरीर पर खुदे हैं। "क" से "द" तक २५ स्पर्श वर्ण सर्प की कुण्डलियों से बने हुये सम चतुष्कोणों में दीख पड़ते हैं। शेष सभो वर्ण के अनुसार एवं तीन प्रकार के विसर्ग, विसर्जनीय जिव्हामूलीय और उपध्मानीय भो यथास्थान दीख पड़ते हैं। सांप की पूछ में धातुओं के वर्तमानकाल के परस्मैपद और आत्मने पद प्रत्यय है। इस नागबंध से सहज ही अनुमान होता है कि देवदर्शन के सिवाय पाठशाला के रूप में भी मन्दिर का उपयोग होता होगा। सर्पबंध के पास छोटे लेखों में मालवे के परमार वंशीय राजा उदयादित्य का नामोल्लेख है। अभी इस मन्दिर में खण्डित जैन प्रतिमाएं प्रतिष्ठित हैं.

किन्तु लेख पढ़ने मे नहीं आते।

यह मन्दिर खुदाई में ग्वालियर की पहाड़ी पर बने हुये सास-बहू के सुन्दर मन्दिर से मिलता जुलता है। सभा मण्डप के बढ़िया खुदाई वाले चार आधार-स्तम्भ भी दर्शनीय हैं। मण्डप के गुम्बज की बनावट और उसके भीतर की खुदाई आबू पर देलवाड़ा गांव के विमलशाह और तेजपाल निर्मित सुप्रसिद्ध जैन मन्दिरों की खुदाई से मिलती जुलती है। निमाड़ के तपोधन लोक सेवक श्री वि. स. खोड़े साहब के सम्पादकत्व में निकलने वाली मासिक "वाणी" के निमाड़ विशेषांक भाग २ में श्री ओझा रामेश्वर गौरीशंकरजी एम. ए. लिखते हैं कि कुछ वर्षों पूर्व चौबारा डेरा के आसपास की थोड़ी सी भूमि खोदी गई थी जिसके फलस्वरूप कुछ विशालकाय जैन-प्रतिमाएं निकलीं। वे अब भी वहां दीख पड़ती हैं। मैंने इस देवालय के द्वार के आसन को देखा था जिस पर वि० सं० १३३२ का दो पंक्ति का लेख खुदा हुआ है। यह इस समय इन्दौर संग्रहालय (म्युजियम) में सुरक्षित है। इनमें एक सिंह, दो हाथी और मध्य में धर्मचक्र दीख पड़ते हैं।"

चौबारा डेरा क्र. २

खरगौन-ऊन सड़क के किनारे नहालों की बस्ती के पास एक दूसरा सुविशाल एवं सुन्दर जैन मन्दिर है। यद्यपि अब इसकी शिखर नहीं रहा तो भी निस्सन्देह यह ऊन के मन्दिरों में सबसे अधिक सुन्दर है। इसमें चतुरसे मण्डप हैं। जिसके बीच आठ थाबों का पर एक गोल गुम्बज है। मण्डप के चार

द्वार हैं, जिनमें पूर्व और पश्चिम के द्वारों से बाहर जाने की सीढ़ियां हैं, एक द्वार से गर्भगृह में पहुँचते हैं इसमें अभी कोई जैन मूर्तियां नहीं हैं। परन्तु सन् १६३० के पहले इसमें दो विशाल प्रतिमाएं थीं। जिनमें से एक शान्तिनाथ भगवान की प्रतिमा थी, जिस पर सं. १२४२ माघ सुदी ७ की प्रतिष्ठा का होना लिखा है। दूसरी प्रतिमा जिस पर वी. सं. १२३६ का अनुमान होता है। लेख साफ–साफ देखने में नहीं आता। ये प्रतिमाएं भी इन्दौर नवरत्न मन्दिर (पुरातत्व संग्रहालय) में रखी गई हैं।

पहाड़ मन्दिर

धर्मशाला के ठीक सामने दो फर्लांग जाकर पहाड़ पर एक मन्दिर आता है। जो वर्षाऋतु में ग्वालों के विश्राम लेने के कारण ग्वालेश्वर नाम से प्रसिद्ध है। यही पावागिरी सिद्धक्षेत्र है जिसका वर्तमान नाम शान्तिनाथ मन्दिर रखा है। सभा–मण्डप के सामने के अर्द्ध–मण्डप के सिवाय इसकी बनावट चौबारा डेरा नं. २ से मिलती जुलती है। शिखिर के आमलक और चूड़ामणी को छोड़कर इसका अधिकांश भाग अखण्डित था। इसके सभा मण्डप की छत का बाहरी भाग तथा गर्भगृह की कुर्सी का कुछ अंश आज भी कलाकार की लीला का परिचय दे रहा है। इस देवालय के सम्बन्ध में विशेष उल्लेखनीय यह है कि छतों पर कमल बने हैं। भीतर वेदी है, आगे सभा-मण्डप है, तीन द्वार हैं, द्वारों पर पद्मासन मूर्तियां हैं। इसका गर्भगृह सभा–मण्डप की सतह से कोई दस

फुट नीचे है । गर्भगृह में तीन भव्य प्रतिमाएं खड्गासन हैं । जो कि तीर्थङ्कर भगवान कुम्भ, शान्तिनाथ तथा अरहनाथ की हैं । दोनों तरफ अभिषेक करने के लिये सीढ़ियाँ हैं, ताकि प्रक्षालन में सुविधा हो ।

मन्दिरों का निर्माता और ऊन नाम

इन प्राचीन मन्दिरों के वृतान्त के साथ ही पाठकों को यह जिज्ञासा होना स्वाभाविक है कि इनका निर्माता कौन था ? ऊन और वहां के देवालयों के सम्बन्ध में लोगों में यह जन–श्रुति प्रचलित है कि इस स्थान का राजा बल्लाल था । एक बार अपने बाल्यकाल में भूल से एक छोटी सी नागिन को निगल गया था । पेट में रहते हुये जब वह बढ़ने लगी, तब राजा को अत्यन्त कष्ट हुआ । अपने कष्ट के निवारण होने को आशा न रखने से वह गङ्गा में प्राण विसर्जन करने के लिये काशी को चला । मार्ग में एक रात को रानी ने राजा के पेट के भीतर की नागिन और बाहर रहने वाले एक नाग का वार्तालाप सुना । सांप ने नागिन से कहा कि यदि राजा को यह पता लग जाय कि पानी में बुझाया हुआ चूना खा लेने से तेरा अन्त हो सकता है, तो तेरा जीना ही असम्भव हो जायगा । नागिन ने उत्तर दिया कि यदि राजा को तेरे बिल में गरम तेल डालने का ज्ञान हो जाय तो तू शीघ्र ही मर जायगा और जिस विशाल धनराशि की तू नित्य रक्षा करता है, वह भी उसके हाथ लग जायगी । प्रातःकाल रानी ने यह सारा वृतान्त राजा को कह सुनाया । कुछ चूना खा लेने से

उसका स्वास्थ्य ठीक हो गया और उसने उक्त सर्प के बिल का पता लगाकर उसे गरम तेल द्वारा मार डाला और विपुल धन प्राप्त कर १०० तालाबों, १०० मंदिरों और १०० कुओं (बावड़ियों आदि) को बनाने का सङ्कल्प किया। किन्तु दुर्दैव वश इनमें से केवल ९९–९९ ही बन सके और प्रत्येक में एक की कमी रह जाने से इसका नाम "ऊन" (अर्थात कम या कमी वाला) पड़ा[१] । ऊन के सम्बन्ध की उपर्युक्त दन्तकथा में कपोल कल्पना का विशेष भाग जान पड़ता है। वस्तुतः ऊन नाम की कल्पना बहुत सुन्दर है। किन्तु उस पर एकदम विश्वास नहीं किया जा सकता । बल्लाल कौन और कहां का राजा था ? इसके विषय में इतिहास की सहायता से मालुम होता है कि गुजरात के चालुक्य वंश के राजा सिद्धराज जयसिंह (ई० सं० १०९४–११४३) ने मालव पर चढ़ाई कर परमार वंशी राजा नरवर्मा और पुत्र यशोवर्मा को हराया और अपना अधिकार जमा लिया ।[२]

सिद्धराज की मृत्यु के बाद 'कुमारपाल' (ई. सं. ११४३-७४) गुजरात का स्वामी हुआ और मालव देश भी उसके अधिकार में रहा (यह ग्वालियर राज्य में भेलसा के निकट

---

१ दि इन्दौर इस्टेट गैजेटियर (नवीन संस्करण) जि. १ पृ. ६६७

२ गैजेटियर आफ दि बाम्बे प्रेसिडेन्सी जि. १ भाग ५ (हिस्ट्री आफ गुजरात ई. स. १८९६ का संस्करण) पृ. १७७

उदयपुर मे उदयादित्य के मन्दिर के एक से एक शिलालेखों से जान पड़ता है । १) गुर्जरेश्वर पुरोहित सोमेश्वर रचित आबू पर देलवाड़ा गांव के तेजपाल के मन्दिर की वि० सं० १२८७ की प्रशस्ति में कुमारपाल के सामन्त आबू के परमार राजा यशोधवल के हाथ से कुमारपाल के शत्रु मालवे के राजा बल्लाल के मारे जाने का उल्लेख है। इसमे बल्लाल के नाम के साथ मालवपति लिखा होने से उसका मालवे का राजा होना निश्चित है । यशोवर्मा की मृत्यु के पश्चात् कई वर्षों तक मालवे पर परमारों का राज्य नहीं सा रह गया था, क्योंकि उस समय यह देश गुजरात के चालुक्य राजाओं के आधीन था। जान पड़ता है कि यशोवर्मा के अनन्तर बल्लाल या बल्लालदेव नामक किसी व्यक्ति ने मालवे मे थोड़ी बहुत भूमि प्राप्त कर मालवपती की उपाधि धारण कर ली हो । कुमारपाल के राज्यरूढ़ होने के अनन्तर उसके विरोधी दल में इस बल्लाल का ही सहयोग था । इससे मालूम हुआ कि यह मालवे का राजा था और अक्टूबर-नवम्बर सन् १९३२ ई. की इन्डियन ऐन्टिक्वेरी में श्री डी. सी. गंगुली महोदय ने राजा बल्लाल को होयलवंशी राजा थे ऐसा बतलाया है ।२

---

१ रोद: कंदर वर्तिकीर्तिलहरी लिप्ता मृता शुद्युतेर प्रद्युम्न वंशो यशोधवल इत्यासीत्तनू जातत: । यश्चौलुक्य कुमारपाल नृपति प्रत्यर्थितामागतमत्वास्त्रत्वरमेव मालवपति बल्लाल मालब्धवान ॥ ३५ ॥

२ धार स्टेट गैज़ेटियर, परिशिष्ट सी. पृ. १६२

उसका स्वास्थ्य ठोक हो गया और उसने उक्त सर्प के बिल का पता लगाकर उसे गरम तेल द्वारा मार डाला और विपुल धन प्राप्त कर १०० तालाबों, १०० मंदिरों और १०० कुओं (बावड़ियों आदि) को बनाने का सङ्कल्प किया। किन्तु दुर्दैव वश इनमें से केवल ९९-९९ ही बन सके और प्रत्येक में एक की कमी रह जाने से इसका नाम " ऊन " (अर्थात कम या कमी वाला) पड़ा[1]। ऊन के सम्बन्ध की उपर्युक्त दन्तकथा में कपोल कल्पना का विशेष भाग जान पड़ता है। वस्तुतः ऊन नाम की कल्पना बहुत सुन्दर है। किन्तु उस पर एकदम विश्वास नहीं किया जा सकता। बल्लाल कौन और कहां का राजा था ? इसके विषय में इतिहास को सहायता से मालुम होता है कि गुजरात के चालुक्य वंश के राजा सिद्धराज जयसिंह (ई० सं० १०९४-११४३) ने मालव पर चढ़ाई कर परमार वंशो राजा नरवर्मा और पुत्र यशोवर्मा को हराया और अपना अधिकार जमा लिया।[2]

सिद्धराज की मृत्यु के बाद 'कुमारपाल' (ई. सं. ११४३-७४) गुजरात का स्वामी हुआ और मालव देश भी उसके अधिकार में रहा (यह ग्वालियर राज्य में भेलसा के निकट

---

१ दि इन्दौर इस्टेट गैजेटियर (नवीन संस्करण) जि. १ पृ. ६६७.

२ गैजेटियर आफ दि बाम्बे प्रेसिडेन्सी जि. १ भाग ५ (हिस्ट्री आफ गुजरात ई. स. १९९६ का संस्करण) पृ. १७७

उदयपुर मे उदयादित्य के मन्दिर के एक से एक शिलालेखों से जान पड़ता है । १) गुर्जरेश्वर पुरोहित सोमेश्वर रचित आबू पर देलवाड़ा गांव के तेजपाल के मन्दिर की वि० सं० १२८७ की प्रशस्ति में कुमारपाल के सामन्त आबू के परमार राजा यशोधवल के हाथ से कुमारपाल के शत्रु मालवे के राजा बल्लाल के मारे जाने का उल्लेख है । इसमे बल्लाल के नाम के साथ मालवपति लिखा होने से उसका मालवे का राजा होना निश्चित है । यशोवर्मा की मृत्यु के पश्चात् कई वर्षों तक मालवे पर परमारों का राज्य नहीं सा रह गया था, क्योंकि उस समय यह देश गुजरात के चालुक्य राजाओं के आधीन था । जान पड़ता है कि यशोवर्मा के अनन्तर बल्लाल या बल्लालदेव नामक किसी व्यक्ति ने मालवे मे थोड़ी बहुत भूमि प्राप्त कर मालवपती की उपाधि धारण कर ली हो । कुमारपाल के राज्यरूढ़ होने के अनन्तर उसके विरोधी दल में इस बल्लाल का ही सहयोग था । इससे मालूम हुआ कि यह मालवे का राजा था और अक्टूबर–नवम्बर सन् १९३२ ई. की इन्डियन ऐन्टिक्वेरी में श्री डी. सी. गंगुली महोदय ने राजा बल्लाल को होयलवंशी राजा थे ऐसा बतलाया है ।२

---

१ रोद: कंदर वर्तिकीर्तिलहरी लिप्ता मृता शुद्युतेर प्रद्युम्न वंशो यशोधवल इत्यासीत्तनू जातत: । यश्चौलुक्य कुमारपाल नृपति प्रत्यर्थितामागतमत्वास्त्रत्वरमेव मालवपति बल्लाल मालब्धवान ॥ ३५ ॥

२ धार स्टेट गैजेटियर, परिशिष्ठ सी. पृ. १६२

श्री हेमचन्दजी मिश्रीलालजी दोशी, बड़वानी
उपसभापति

श्री गेंदालालजी बेनाड़ा, खरगोन
संयुक्त महामंत्री

इन सब बातों को देखते हुये हमें ऊन के देवालयों के बल्लाल द्वारा बनाये जाने की दन्तकथा असङ्गत प्रतीत नहीं होती । अभी इसका उल्लेख हाल में मिली हुई एक मूर्ति पर खुदे हुये लेख से इसकी पुष्टी होती है । उसमें राजा बल्लाल के समकालीन प्रभाचन्द्राचार्य[1] का नाम अङ्कित है—अस्तु

सांप को मारने की कथा से, जनमेजय के सर्प—सत्र की भांति अनुमान हो सकता है कि उसने किन्हीं नागवंशी क्षत्रियों का नाशकर उनसे विपुल धन प्राप्त किया है और उससे देवालय, तालाब आदि बनवाये हों। ऊन में अभी तक कमलयुक्त तलैयां भी दीख पड़ती हैं ।

शिलालेख व मूर्तियों की नाप

(पांच मूर्तियों व चरण पादुका का वर्णन)

प्राचीन चरण पादुका का १ बालिस्त दो अंगुल की है, लेख नहीं है, पांच प्रतिमाएँ क्रमशः इस प्रकार हैः—

(१) खड्गासन १। हाथ दोनों तरफ दो इन्द्र, ऊपर दो देव व दो पद्मासन, एक खड्गासन बगल में इन्द्रलेख मिट गया है। (२) खड्गासन १। हाथ ऊपर के समान ये दोनों जोड़ी हैं। (३) खड्गासन १। हाथ ऊपर के समान दो इन्द्र, दोनों

---

१ ब्र शीतलप्रसादजी कृत मद्रास व मैसूर प्रान्त के प्राचीन जैन स्मारक ।

तरफ दो देव ऊपर पद्मासन १ ख० छोटी। (४) खड्गासन हाथ एक इन्द्र चमर लिये हुये, पाषाण १ हाथ का। (५) श्री महावीर भगवान की मूर्ति पद्मासन १॥ हाथ या तीन फुट बड़ी सुन्दर बहुत ही उत्तम ध्यान है मानों आत्मानन्द में मग्न हो रही है। मुख पर बड़ी ही सुख शान्ति बरस रही है। यह मूर्ति जयपुर के प्रसिद्ध महावीर स्वामी जो चांदनगांव में विराजित हैं उसी के समान है वर्ण इसका कुछ नीला है और जयपुर का वर्ण कुछ लाल है। इसके नीचे लिखे लेख इस प्रकार हैं:–

"आचार्य श्री प्रभाचन्द्र प्रणमति नित्यं १ सं० १२५२ माघ सुदी ५ रवौ चित्र कुटान्वये साधु बाल्हु भार्या शाल्ह तथा मन्दोदरी सुत गोल्ह रतन भालू प्रणमति नित्य"

इस समय सन् ११९५ था तब धार में सुमल वर्मदेव का राज्य था।

मूर्ति व चरण-पादुका

यह मूर्ति धर्मशाला के पीछे जमीन खोदते समय मिली थी। यह मूर्ति तीसरे भगवान सम्भवनाथजी की है। मूर्ति तीन फिट ऊँची बहुत ही मनोज्ञ है जिसकी शिल्प देखते ही बनती है मूर्ति की मनोहरता और उसकी वीतरागता छबि हृदय मे विरागता के भावों को पैदा किये बिना नहीं रहती। यह मूर्ति मिति अगहन सुदी ५ सं. १९९३ प्रातः ८ बजे निकली

इस पर सं० १२१८ का दो पंक्तियों में लेख भी है – साथ में एक चरण पादुका भी निकली जो एक बालिस्त की है।

पहाड़ मन्दिर पर जो शान्ति, कुम्भ व अरहनाथ की प्रतिमाएँ हैं, वह खड्गासन हैं। चिह्न साफ प्रगट नहीं है। बड़ी ही सुन्दर ध्यान मग्न है, जो दर्शकों के मन में सच्ची वीतरागता दर्शानेवाली है। क्रम से इस प्रकार है–

मध्य की प्रतिमा	९ हाथ १२॥ फीट ऊँची है
सिर से एड़ी तक	२१॥ फीट ऊँची
सिर ...	२ फीट ३ इंच चौड़ा
हाथ ...	६ फीट लम्बा
चरण एड़ी से अंगूठे तक	१ फीट ४ इंच लम्बे
कान ...	६॥ इंच लम्बे
नाक ...	६ इंच लम्बी
आँख ...	४ इंच लम्बी
सिर ...	२ फीट लम्बा
घुटने से एड़ी तक	३ फीट लम्बा

शेष दोनों प्रतिमाएँ क्रम से इस प्रकार हैं:—

सिर से एड़ी तक	८ फीट ऊँचे
सीना ...	१ फीट लम्बा
हाथ ...	३ फीट १० इंच लम्बा
चरण एड़ी से अंगूठे तक	१ फीट लम्बे
कान ...	७ इंच लम्बे

नाक	...	४ इंच लम्बी
आँख	...	२॥। इंच लम्बी
सिर	...	१ फीट लम्बा
घुटने से एड़ी तक		२ फीट लम्बा है।

मध्य की प्रतिमा की दाहिनी तरफ की मूर्ति पर लेख बड़ा है ठीक नहीं पढ़ा जाता। जो कुछ पढ़ा गया वह यह है–

"संवत् १२६३ जेष्ट वदी १३ गुरौ...... आचार्य श्री यशकीर्ति प्रणमति"

नीचे इस प्रतिमा के दो हाथी व यक्ष यक्षणी हैं। दूसरी प्रतिमा पर भी यह लेख कुछ छोटा है।

सं० १२६३ जेष्ट वदी १३ गुणोसिधी पं. तरङ्गसिंह सुत जीतसिंह प्रणमति"

नीचे हाथी व यक्ष-यक्षणि हैं, दोनों प्रतिमाओं के दोनों तरफ इन्द्र हैं। यहां मन्दिरों व मूर्तियों की शिल्प–कला को देखकर भारत के कलाकारों के प्रति मस्तक श्रद्धा से नत हो जाता है। यहां पर बहुत-सी संख्या में जैन-मूर्तियां पाई जाती हैं, दस-ग्यारह मन्दिरों के सिवाय और भी कई म न्दरों के चिह्न दिखलाई पड़ते हैं। यह सब देखकर यह सम्भवत: मालूम किया जा सकता है कि यहां का राज्य पहले जैन राजाओं के अधिकार में रहा है और दि. जैन धर्म उस समय जन साधा– साधारण का मुख्य धर्म भी रहा है। नेमाड़ प्रान्त में ११ वीं शताब्दि से १७ वीं शताब्दि तक प्रतिष्ठित की हुई अनेक जैन

श्री लखमीचंदजी जैन
सहायक मंत्री

आप धार्मिक एवं सेवाभावी वृत्ति के सज्जन हैं। सिद्धक्षैत्र सिद्धवरकूट पर बने सुन्दर घाटों को स्वयं रूचि लेकर पूरा कराने में समय दिया। पावागिरि सिद्धक्षैत्र के सहायक मंत्री होने के साथ ही आप नगर पालिका मंडलेश्वर के सदस्य तथा वहां के सार्वजनिक पुस्तकालय के उपाध्यक्ष भी हैं।

मूर्तियां मिलती हैं, इससे भी पता चलता है कि इस प्रान्त में जैन धर्म का यथोचित प्रचार था, इसमें सन्देह नहीं। इस तरह नेमाड़ प्रांत में आदिनाथ स्वामी (कर्म भूमि से प्रारम्भ) से लेकर आज तक बराबर जैन धर्म का आदर पूर्वक अस्तित्व कायम है।

ऊन में अभी तक कोई उल्लेखनीय शिलालेख नहीं मिला सम्भव है, भविष्य में किसी दिन इन मन्दिरों के भग्नावशेषों और आसपास की भूमि की खुदाई होगी तब अवश्य कुछ और महत्वपूर्ण बातें प्राप्त होगी ऐसी आशा है।

पावागिरि के जीर्णोद्धार का मूहूर्त्त

देवगढ़ क्षेत्र को हस्तगत करने के लिये समाज को कई वर्ष तक प्रयत्न करना पड़ा था, अतः इस क्षेत्र के भी शीघ्र प्राप्त होने की आशा नहीं थी, किन्तु समाज के सुप्रसिद्ध दा. वी. रावराजा, राज्य भूषण, राज्यरत्न, तीर्थ-भक्त, शिरोमणि, जैन, दिवाकर सर सेठ सा० स्व. श्री हुकुमचंदजी के असीम प्रयत्न और राज्य के तात्कालीन न्यायप्रिय अधिकारियों की कृपा का ही यह फल है कि एक वर्ष के भीतर ही क्षेत्र का अधिकार दिगम्बर जैन समाज को प्राप्त हो गया।

इस क्षेत्र का आदेश प्राप्त होते ही दिनांक ५-१०-३५ कुंवार शुक्ल ५ (वीर निर्वाण सं. २४६१) को प्रातः १० बजे श्रीमान् सर सेठ श्री हुकुमचंदजी के कर कमलों द्वारा शिलान्यास का मूहूर्त्त विधि पूर्वक समारोह सहित संपन्न हुआ।

जिर्णोद्धार का कार्य पूरा कराने में तीर्थभक्त श्री हरसुखजी सुसारी, मन्दसौर निवासी कुशल इँजीनियर श्री जुगलकिशोरजी तथा कच्छ के श्री हीरजी भाग्री मिस्त्री का नाम ग्रस्मरणीय है।

मेले के बाद के कार्य

सर सेठ श्री हुकुमचंदजी की शुभ-प्रेरणा से इन्दौर निवासी सेठ श्री घासीलालजी काला ने तीर्थ पर प्रतिष्ठा महोत्सव बहुत धूमधाम से संपन्न कराया। उस समय सर सेठजी के हार्दिक प्रयत्न से विशेष दान एकत्रित हुग्रा। जिससे क्षैत्र में एक सुविशाल धर्मशाला बनवाई गई। ग्रब तो प्रस्तुत धर्मशाला बन जाने से यात्रियों को प्रर्याप्त सुविधा हो गई है।

तीर्थ-भक्त, धर्मवीर सेठ श्री हरसुखजी के सत्परामर्श से बड़वाहा-निवासी दानशीला श्री बेशरबाईजी ने धर्मशाला में ही एक विशाल मंदीर बनवा दिया ग्रौर भगवान श्री महावीर स्वामी की जो प्रतिमा पुजारा पं. श्री चेतनलालजी को स्वप्न देकर सबसे पहिले प्राप्त हुई थी, उस दिव्य प्रतिमा का उत्सव करके मंदीर में स्थापित कराई।

इसी प्रकार मार्ग शीर्ष १५ सं. १९९४ को सेठ श्री नवलचन्दजी पेमासाजी बड़वाह निवासी ने पहाड़ स्थित 'श्री शांतिनाथजी' के मन्दीर के सम्मुख ४० फुट ऊंचा मान-स्तम्भ बनवाकर उत्सव कराया।

श्री राजधरलालजी जैन
मुनीम सिद्धक्षैत्र.

आप जिला—झांसी अन्तर्गत कुवागांव के निवासी हैं। आपका स्वभाव बहुत ही सरल और उदार है। आपको सदैव क्षैत्र की उन्नति की ही धुन बनी रहती है। क्षैत्र आप जैसे तत्पर मुनीम को पाकर धन्य है।
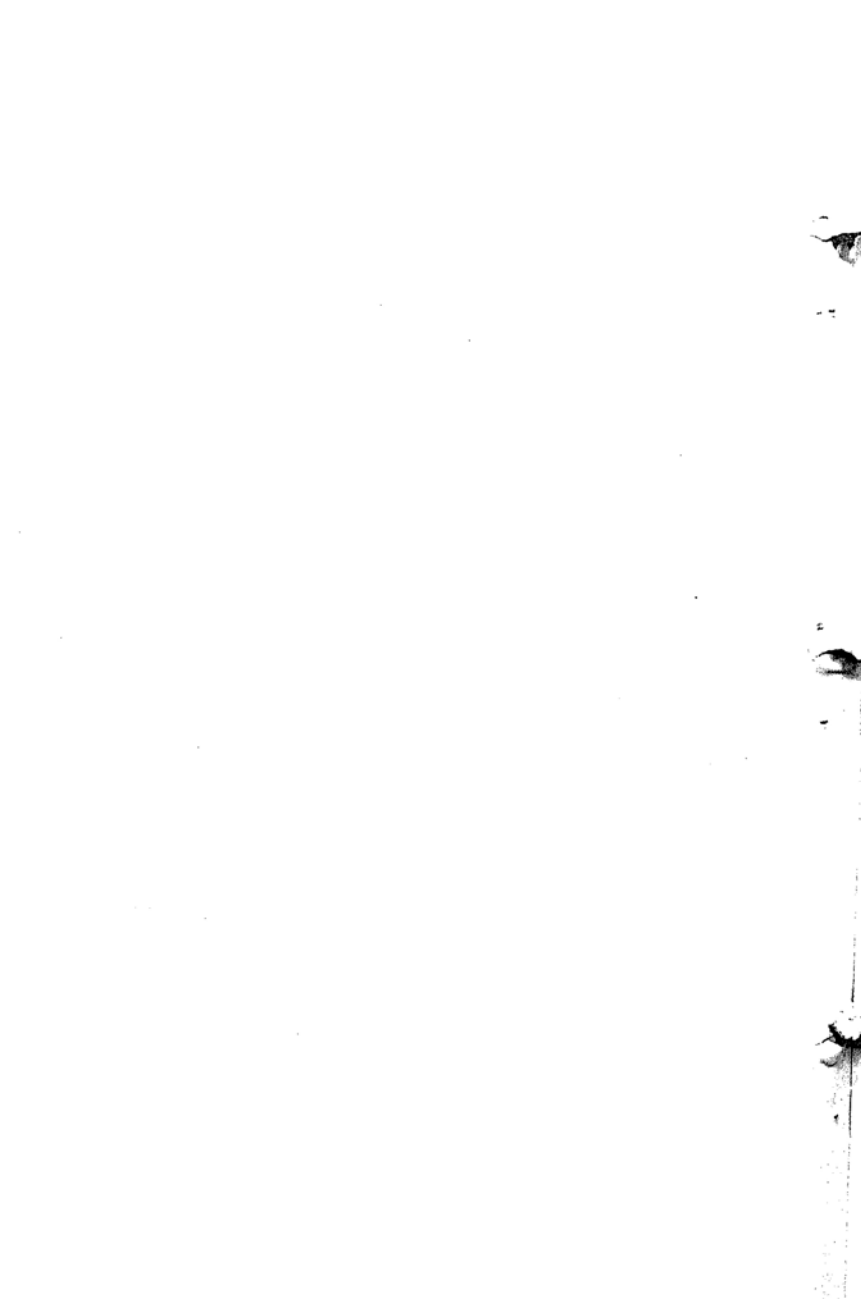
खण्डवा के सेठ श्री नत्थुसाजी माधवसाजी फर्म के मालिक सेठ श्री चुन्नीलालजी ने धर्मशाला का विशाल द्वार बनवाया एवम् धर्मशाला में कुंआ खुदवाकर अक्षय-पुण्य संचित किया। वास्तव में आपने एक बड़ी भारी कमी की पूर्ति की।

इस समय धर्मशाला में ४२ कमरे बनकर तैयार हैं और जिनके दान की धनराशि से वे बनकर तैयार हुए हैं. उनके नाम का 'शिला-लेख' कमरे के द्वार पर लगा दिया गया है।

ग्राम ऊन तथा सिद्धक्षेत्र पावागिरि

खरगोन से जुलवान्या जाने वाली सड़क पर किनारे ही जैन धर्मशाला है। धर्मशाला से दो फर्लाङ्ग की दूरी पर पावागिरि सिद्धक्षेत्र है। सिद्धक्षेत्र के पूर्व भाग में चेलना नदी बहती है, पश्चिम में कमल तलाई है जिसमें कमल-फूल खिलते रहते हैं। उत्तर में ग्राम ऊन है। म. प्र. राज्य के अन्तर्गत ग्राम ऊन नीमाड़ जिले का करीब हजार घर की बस्ती वाला एक गांव है। यहां पर डाक घर, थाना, दवाखाना तथा माध्यमिक शाला भी है। दक्षिण दिशा में एक कुन्ड बना है जो नारायण कुन्ड के नाम से प्रसिद्ध है और वैष्णव लोग उसको धर्म-तीर्थ मानते हैं। यही बीच की भूमी तपोभूमि कहलाती है और इसी स्थान से सुवर्ण–भद्र आदि चार मुनीश्वरों ने मोक्ष प्राप्त किया है।

किवदंती है कि किसी समय यहां ९९ मंदिर, ९९ तालाब, तथा ९९ कुंए अथवा बावड़ियां थीं, परन्तु कालान्तर में

अधिकांश लुप्त हो गई। यद्यपि उनमें से कुछ जीर्ण-शीर्ण दशा में आज भी मौजूद है। ये भग्न–मन्दिर भारत सरकार के पुरातत्व विभाग के अन्तर्गत संरक्षित हैं।

ऊन में आज भी यत्र – तत्र मन्दिरों के चिन्ह पाये जाते हैं। यदि भारत सरकार अपने पुरातत्त्र विभाग के अन्तर्गत ऊन में यथास्थान खुदाई का काम करावे तो अतीत में छिपा इतिहास प्रकट हो सकता है।

कालान्तर से प्राप्त मूर्तियों के संवत से पता चलता है कि इस क्षेत्र का समय समय पर जीर्णोद्धार होता रहा है, कारण कि मूर्तियों पर संवत् जुदे जुदे हैं। इन बातों से भी मालूम होता है कि यह वही पावागिरी सिद्ध क्षेत्र है जो बावनगजा तथा सिद्धवरकूट के मध्य है और चरणचिन्ह भी इसी स्थान को सिद्धक्षेत्र को होना प्रकट करते हैं।

दानदाताओं की चित्रावली

श्री हुकमचन्द मल्लासा सराफ, महेश्वर

श्रीमती सुगंधीबाई, खंडवा

कु. श्री जीवनलता देवी, ऊन
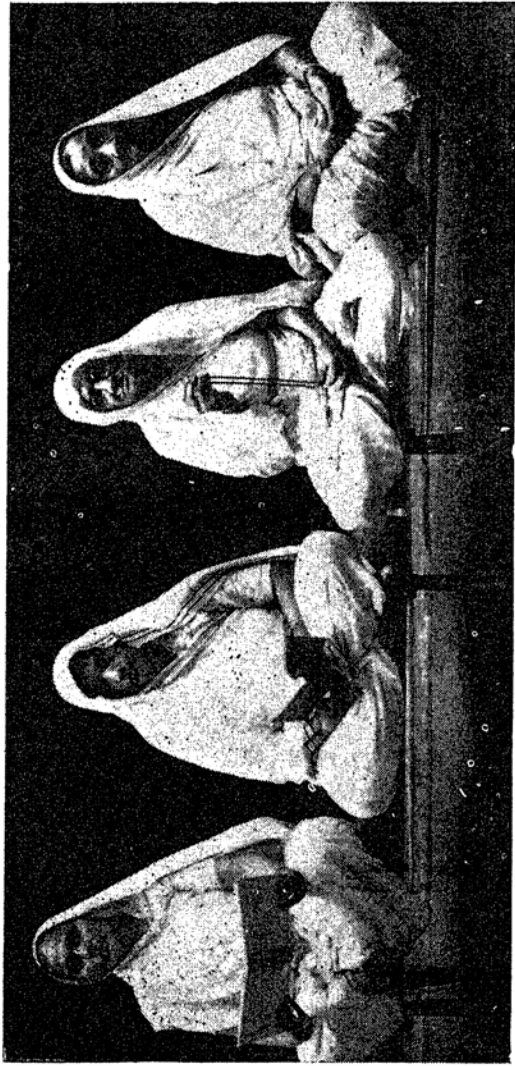
बाएं से दाएं:—श्री गौरीबाईजी खन्डवा, श्री राजूबाई, बड़वाहा, दा. शो. चन्द्रावतोबाई, खन्डवा
श्रीमति सुखमाबाई, खन्डवा
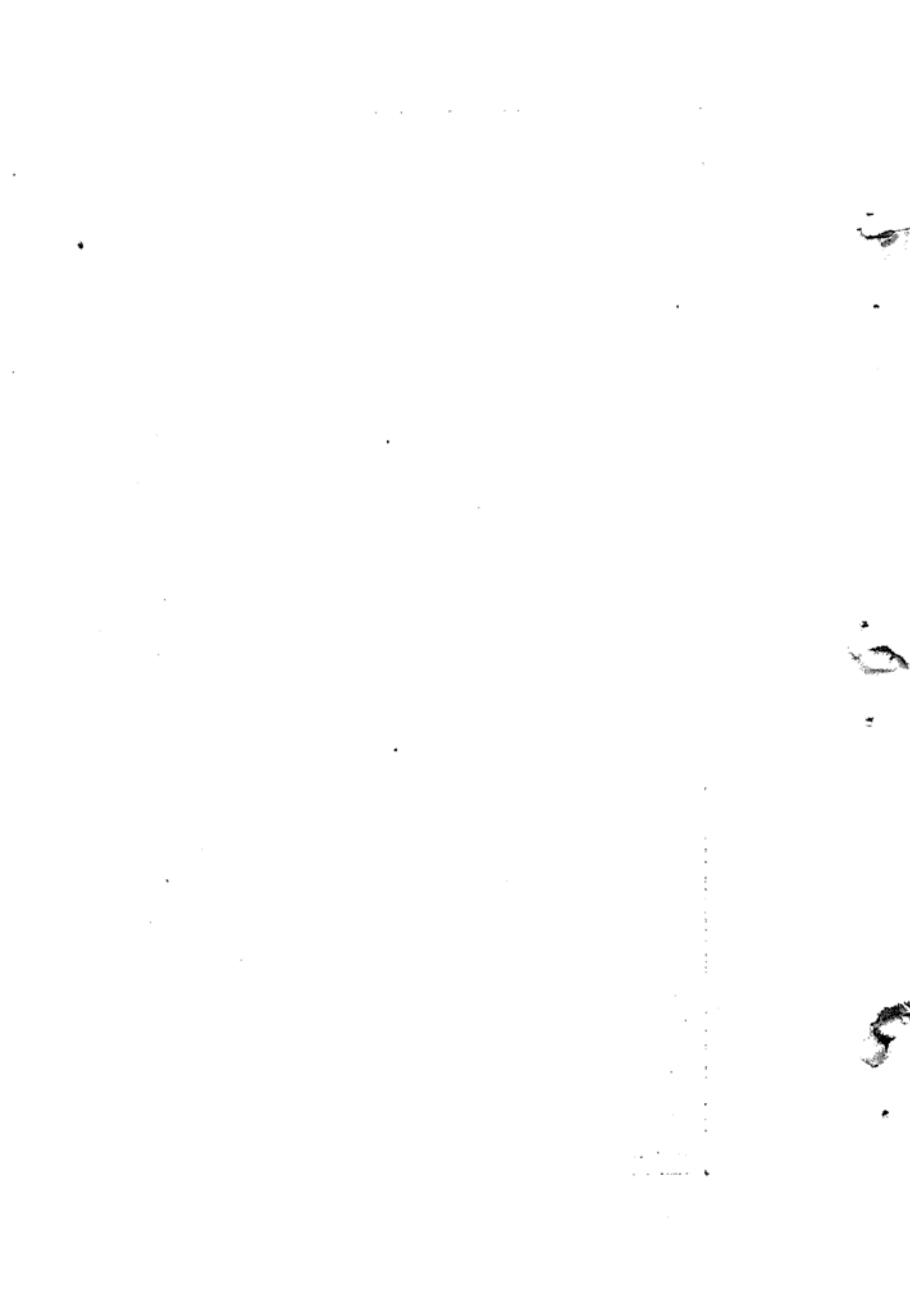
परिशिष्ट क्रमांक १

शान्तिनाथ मन्दिर प्राप्ति के आज्ञा-पत्र की नकल

No. 7 of 1935-36

From, The I/C Curator,
The Museum,
INDORE.

To, St. Seth Harsukhalalji
Leader Digambar jain Community,
SUSARI.

Dated the 4th October 1935

Sir,

I have the honour to inform you that His Highness The Maharaja in Huzur Shree Shankar order No. 294 dated 29-8-35 has been pleased to order that the Digambar jain Community may be allowed.

1. To retain the newly discovered images at Oon.

2. To Instal them in the temple of Gwaleshwar at oon, and.

3. To repair the temple of Gwaleshwar at their own cost in case they agree to the following conditions.

(i) The repairs will be done in Consultation with the curator, the Museum Indore, so as not to injure the Archaeological importance and artistic merit of this ancient monument.

(ii) The Images will never be removed from oon and.

(iii) The Government will continue to remain the owner of the ancient monuments at onn.

I am, therefore to request you kindly to let me know when you propose to commence the work of repairs to the Gwaleshwar temple. It is further requested that details of the works you propose to undertake the name and the full address of the person who will supervise the works of repairs and the person in whose name further correspondence in this connection may be carried on, may kindly be communicated to me at an early date.

I have the honour to be

Sir,

Your most obedient servant

V. Singh

I/C Curator the museum Indore.

परिशिष्ट क्रमांक २

तात्कालीन होलकर राज्य के गजेटियर में ग्राम 'ऊन' के सम्बन्ध में जो विवरण प्रकाशित हुआ था, वह इस प्रकार है:-

Un (Pargana Segaon, district Nimar) is an old town situated on the Hatni, a tributary of the Borad between 21°52 N and 75°27 E, It is 27 miles south-east of Brahmangaon, the pargana head quarters from where it is accessible by a country track, and is 10 miles west to Khargone the district headquarters with which it is connected by a metalled road. The nearest railway station is Sanawad (52 miles) on the Holkar state Railway.

The population of Un in 1921 numbered 1650 (males 815, females 835) of whom 1534 were Hindus 31 Mahomadens and 85 Animist. The number of occupied houses was 835. It has a vernacular school, a police outpost and a post office. A forest Range officer is posted here.

This place, though formarly of some size and an old town and headquarters of a Thana is now but a small village, its only importance lying in the remains of old jain temples which are still standing there. These belong to the 12th century. In one of those, an Inscription of one of the paramara kings of Dhar has been found.

The following legend explains the origin of the name.

"Un":- Raja Ballal of Un was suffering untold agony from a snake which had now grown to a considerable size. Despairing of recovery he set out for Benares with the determination of drowning himself in the sacred Ganges. One night his Rani, who had accompanied her lord, over heard a conversation between the snake (a female) in the Raja's stcmach and a male snake outside. The male snake informed the snake in the Raja's stomach that her life would not be worth anything if only the Raja knew that slaked lime were administered, she would die and his troubles cease. The female retorted that his life would also be of short duration if the Raja knew that if hot oil were poured in to his hole he would die and the immense treasures he guarded would fall in to his (the Raja's) hands. The Rani next morning informed her husband of what she had heard. He ate some lime and was cured, and then sought the hole, killed the snake with hot oil and seized the treasure with which he vowed to build 100 temples, 100 tanks and 100 wells but only 99 of each were completed, and the deficiency gave the place its name of 'Un' meaning the deficient.

The Indore state Gazetter volume I Text by L, C. Dhariwal M. A. LL. B. page 669

परिशिष्ट क्रमांक ३

सद्धक्षेत्र पावागिरि के अन्तर्गत प्रतिष्ठित प्रतिमाओं की तपसील

★ श्री शांतिनाथ मंदिर के गर्भालय में

अ. क्र.	नाम मूर्ति	सख्या	धातु	संवत्	स्थित
१	श्री शान्तिनाथजी	१	पाषाण	१२६३	खड्गासन
२	श्री कुन्थुनाथजी	१	,,	,,	,,
३	श्री अरहनाथजी	१	,,	,,	,,

★ गर्भालय के दरवाजे के दोनों बाजू में

अ. क्र.	नाम मूर्ति	सख्या	धातु	संवत्	स्थित
४	चरण पादुका	२	,,	,,	—
५	प्रतिमाजी खंभों पर	८	,,	—	खड्गासन
६	प्रतिमा	२	,,	—	(दो वेदियों पर विराजमान हैं)

★ मंदिर के सभा मण्डप में

अ. क्र.	नाम मूर्ति	सख्या	धातु	संवत्	स्थित
७	श्री सम्भवनाथजी	१	,,	१२१८	पद्मासन
८	श्री शान्तिनाथजी	२	पीतल	२४६३	,,
९	श्री महावीर स्वामी	१	पाषाण	,,	,,
१०	प्राचीन प्रतिमा	२	,,	—	(खंभों पर)
११	श्री पारसनाथजी	१	,,	२४६३	पद्मासन
१२	प्राचीन प्रतिमा	२	,,	,,	(खंभों पर)
१३	श्री महावीर स्वामी	१	,,	,,	पद्मासन
१४	प्राचीन प्रतिमा	१	,,	२४६३	(खंभों पर)

★ मानस्तम्भ में

अ. क्र.	नाम मूर्ति	संख्या	धातु	संवत्	स्थित
१५	श्री चन्द्रप्रभुजी	४	मकराना पाषाण	,,	पद्मासन

चन्द्रप्रभु चैत्यालय में

१६	श्री शान्तिनाथजी	१	,,	२४७८	,,

★ पन्च पहाड़ो पर

१७	चरण पादुका	२ जोड़	पाषाण	२४६३	—
१८	चरण पादुका	,,	मकराना पाषाण	—	—

★ श्री महावोर चैत्यालय की वेदी में

१९	श्रीमहावीरजी मूलनायक	,,	पाषाण	१२५२	पद्मासन
२०	श्री आदिनाथजी	१	मकराना पाषाण	२४६६	,,
२१	श्री पद्म प्रभुजी	१	,,	,,	,,
२२	श्री महावीरजी	१	पीतल	२४६३	,,
२३	श्री सिद्ध भगवान	२	,,	,,	खड्गासन
२४	श्री पारसनाथजी	१	,,	(अप्रतिष्ठित)	पद्मासन
२५	श्री शान्तिनाथजी	३	मकराणा पाषाण	२४७८	,,
२६	श्री ,,	१	,, ,,	—	,,

★ मंदिर के ऊपर शिखिर में

२७	श्री शान्तिनाथजी	१	,, ,,	२४६६	,,

★ मानस्तम्भ धर्मशाला में

२८	श्री चन्द्रप्रभुजी	४	,,	२४६३	पद्मासन

सोने के कलश

श्री शान्तिनाथ मन्दिर, सभामण्डप की वेदियों, दरवाजों व मानस्तम्भों पर सोने के कलशारोहण की तपसील।

१ श्री शान्तिनाथ मन्दिर के शिखर पर तीर्थ भक्त सेठ हीरालाल घासीलालजी काला, मल्हारगंज की ओर से वीर संवत् २४६३ में।

१ सभा मण्डप शिखर पर श्रीमान् रायबहादुर रा. भू. सेठ कल्याणमलजी इन्दौर की ओर से वीर सं. २४६३ में।

३ श्री शान्तिनाथ मन्दिर के उत्तर दरवाजे पर तीर्थ भक्त ध. बी. तात्कालीन महामत्री स्व. सेठ हरसुख रोड़मलजी सुसारी की ओर से वीर संवत् २४६३ में।

१ मंदिर के पूर्व दरवाजे पर सेठ मयाचन्दजी दशरथसा., सनावद की ओर से वीर संवत् २४६३ में।

१ मंदिर के पश्चिम दरवाजे पर सेठ दशरथसा चंपालालजी बोनारा व सेठ केशवसा माणकसा, चोलीहाल मु. खंडवा की ओर से वीर सं. २४६३ में।

१ तीर्थ भक्त स्व. सेठ हीरालाल घासीलालजी मल्हारगंज, इन्दौर द्वारा निर्मित वेदी पर स्वयं की ओर से।

१ सेठ बापूलाल पन्नालालजी छावनी, इन्दौर द्वारा निर्मित वेदी पर स्वयं की ओर से।

३ सेठ ताराचन्द प्यारचन्दजो सेठो (जावरा वाला) इन्दौर द्वारा निर्मित वेदी पर स्वयं की ओर से सं. २४६३ में।

३ सेठ इन्दरचन्द छोगालालजी, इन्दौर द्वारा निर्मित वेदी पर स्वयं की ओर से संवत् २४६३ में।

१ श्रीमान् रा. ब. सेठ तिलोकचन्द कल्याणमलजी, इन्दौर द्वारा निर्मित वेदी पर स्वयं की ओर से।

१ सेठ लखमीचन्द घासीरामजी सनावद द्वारा निर्मित वेदी पर स्वयं को ओर से वी. सं. २४६३ में।

१ सेठ नवलचन्द पेमासाजो, बड़वाह द्वारा निर्मित मानस्तंभ पर स्वयं की ओर से वी. सं. २४६४ में।

१ सेठ सदासुख सुगुनचन्दजी, महू की ओर से श्री चन्दाप्रभुजी (पहाड़ का मंदीर) के शिखर पर वी. सं. २४६६ में।

३ सेठ सदासुख सुगुनचन्दजी महू की ओर से वेदी पर वी. सं. २४६६ में।

१ श्रीमती लाड़कीबाई, महेश्वर की ओर से पंच पहाड़ी स्थित वेदी पर वी. सं. २४६६ में।

श्री महावीर-मन्दिर तथा वेदीजी पर सोने के कलश चढ़े-तपसील

१ श्री महावीर मंदीर के शिखर पर श्रीमती दानशीला बेसरबाईजी द्वारा निर्मित मंदीर तथा वेदी पर स्वयं की ही ओर से वी. सं. २४६४ में।

३ वेदी पर वी. सं. २४६४ में।

१ श्रीमती ताराबाई फर्म श्री गापीलाल गुलाबचन्दजी सेठी इन्दौर की ओर से धर्मशाला स्थित मानस्तंभ पर वी. सं. २४७७ में।

यंत्र तपसील

★ श्री शांतिनाथ मंदिर में

अ. क्र.	धातु	संख्या	वेदी का नाम
१	तांबा	१	श्री सम्भवनाथजी की वेदी
२	पीतल	१	„ चन्दाप्रभुजी का मन्दिर

★ श्री महावीर चैत्यालय में

अ. क्र.	धातु	संख्या	वेदी का नाम
३	तांबा	६	श्री महावीर चैत्यालय
४	चांदी	२	„ „ „
५	तांबा	१	„ महावीर चैत्यालय की दीवार में जिसमें तत्वार्थ-सूत्र के दस अध्याय खुदे हैं।
		११	

ऊन आने के मार्ग

पावागिरि सिद्धक्षेत्र ऊन आने के लिये सनावद तथा खण्डवा से आने वाले यात्रियों को खरगोन होकर, एवं इन्दौर से आने वाले यात्रियों महू से जुल्वान्या होकर ऊन उतरना पड़ता है।

ऊन खंडवा से ६३ मील, सनावद से ५३ मील तथा ईन्दौर से ९४ मील तथा खरगोन से सिर्फ ११ मील दूर है।

परिशिष्ट क्र. ४

"श्री दिगम्बर-जैन-सिद्धक्षेत्र–श्री पावागिरीजी सं० कमेटी" के पदाधिकार

(८–१–६० को कल्याण भवन इन्दौर में सम्पन्न हुई बैठक में मनोनीत सदस्यों की नामावलि)

सभापति– श्रीमान् दानवीर, राज्यभूषण, रावराजा सेठ हीरालालजी, इन्दौर

उप-सभापति– श्रीमान् दानवीर, जैनरत्न सेठ राजकुमारसिंहजी इन्दौर

महामंत्री- श्रीमान् सेठ हेमचंदजी मिश्रीलालजी दोशी, बड़वानी
„ श्रीमान् लक्ष्मीचन्दजी हूमड़ मुनीम, खंडवा

संयुक्त महामंत्री- श्रीमान् गेंदालालजी बेनाड़ा, खरगौन

सहायकमंत्री–श्रीमान् सेठ धन्नालालजी दशरथजी जैन, लोनारा
„ „ श्रीमान् सेठ लखमीचन्दजी धन्नालालसा, मंडलेश्वर

मनोनीत सदस्य–

श्रीमान् सेठ दयाचन्दजी पूनाजी जैन, खंडवा
„ „ भँवरलालजी सेठी बेङ्कर्स, इन्दौर
„ „ माणकचन्दजी घासीलालजी काला, इन्दौर
„ „ माणकचंदजी सेठी, आनन्द भवन तुकोगंज, इन्दौर
„ „ मशीरबहादुर गुलाबचन्दजी टोंग्या, इन्दौर
„ „ लाला छगनलालजी मित्तल, इन्दौर
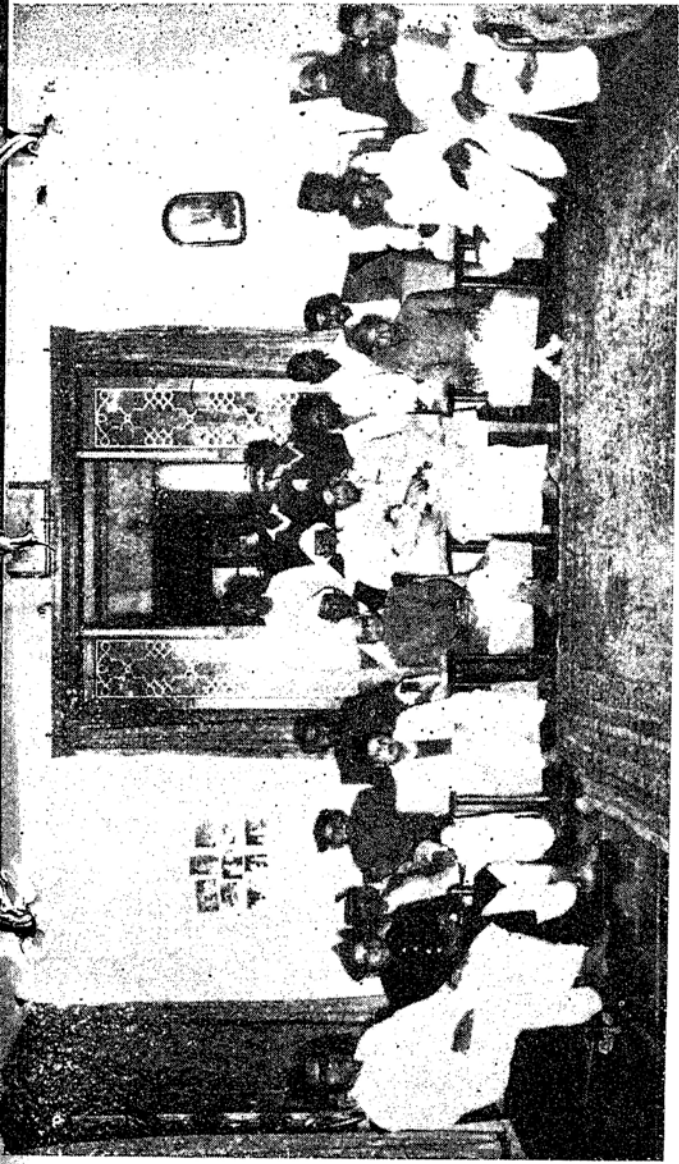
बाएं से दाहिने–सर्व श्री हुकुमचंदजी सराफ, सेठ मोतीलालजी, चंपालालजी कंठाली, माणकचन्दजी काला गुलाबचंदजी टोंग्या, हीरालालजी कासलीवाल (सभापति), हेमचंदजी दोशी (उपसभापति), जव्हरचंदजी मंडलोई दयाचदसाजी, कवरचंदजी जैन।

पिछली पंक्ति में-सर्व श्री भागचंदसा जैन, पन्नालालजी झांझरी, लखमीचंदजी जैन (सहायक मंत्री), मन्नालाल चौधरी, अमोकचंदसाजी जैन, राजधरलालजी मुनीम (सिद्धक्षेत्र, ऊन), सेठ मोतीलालसाजी जैन, सोमचंदसाजी बी. काम; श्री लक्ष्मीचंदजी हूमड़ (महामंत्री)।

श्रीमान् सेठ बालचन्दजी कुशला, इन्दौर
„ „ देवकुमारसिंहजी एम्.ए., एल्-एल्. बी.,इन्दौर
„ „ कैलाशचन्द्रजी चौधरी, सीतलामाता बाजार, इन्दौर
„ „ हीराचन्द हजारीलाल जैन
„ „ माँगीलालजी मेघराजजी जैन, सुसारी
„ „ अमोलकचन्दजी छगनलालजी जैन, सुसारी
„ „ मोतीलालजी चाँदूलालजी बेंकर्स, बड़वानी
„ „ हजारीलालजी बड़नगर वाले, बड़वानी
„ „ मोतीलालजी किशनलालजी जैन, अंजड़
„ „ रामासा घासीरामसा, बालसमुद
„ „ जीवनलालजी चम्पालालजी जैन, अंजड़
„ „ फूलचन्दजी पाटनी, संयोगितागंज, इन्दौर
„ „ जवरचन्दजी गुलाबरायजी बैंकर्स, महेश्वर
„ „ प्यारचन्दजी चम्पालालजी कंठाली, महेश्वर
„ „ बुलचन्दसाजी हीरासाजी जैन, महेश्वर
„ „ हुकुमचन्दजी मल्लासाजी सराफ, बैंगदा वाले, महेश्वर
„ „ गेंदालालजी माधवसाजी जैन, खंडवा
„ „ सोमचन्दजी, बी. काम., खंडवा
„ „ हजारीलालजी मास्टर, खंडवा
„ „ जड़ावचन्दजी जैन, सनावद
„ „ शिखरचन्द लक्ष्मीचन्दजी जैन, सनावद
„ „ मन्नालालजी छज्जूलालजी चौधरी, सनावद
„ „ गेंदालालजी पूनासाजी जैन, सनावद
„ „ भागचन्दजी शिवासाजी जैन, सनावद
„ „ जैनेन्द्रचन्द्रजी जैन, बी. ए., एल्-एल्. बी, खंडवा
„ „ बाबूलालजी जैन (फर्म-सेठ दयाचन्द घनश्यामसा), बड़वाह
„ „ मानमलजी काशलीवाल, बी.कॉम., इन्दौर

श्रीमान् सेठ सुमेरचन्द चौधरी, बड़वाह
,, ,, अनोकचन्दजी सुखचन्दजी जैन, बड़वाह
,, ,, सूरजमलजी चौधरी, बड़वाह
,, ,, कँवरचन्दजी धन्नालालजी जैन, बड़वाह
,, ,, कँवरचन्दजी झन्नालालजी जैन, लोनारा
,, ,, हीरालालजी चम्पालालजी जैन, पंधाण्या
,, ,, पन्नालालजी झांजरी, इन्दौर
,, ,, मोतीलाल चुन्नीलाल, खंडवा
,, ,, अमोलकचन्दजी वकील, खंडवा

साभार

पावागिरि सिद्धक्षेत्र का इतिहास पुस्तक के तृतीय संस्करण के प्रकाशनार्थ दान-दाताओं की नामावलि

१. श्रीमती दा. शी. चन्द्रावतीबाई सा., खंडवा	१०१)
२. श्रीमती राजूबाग्रीजी ध./प. स्व. सेठ चम्पालाल सा. सराफ बड़वाहा	१०१)
३. श्रीमती गौरीबाग्रीजी ध./प. स्व. श्री गोकलचन्दजी जैन परवार (आगरा वाले) खंडवा	१०१)
४. श्रीमती सुगंधीबाई ध./प. सेठ गेन्दालाल साजी, खंडवा	१०१)
५. श्रीमती सुखमाबाईजी, खन्डवा	१०१)
६. श्री हुकुमचन्दजी मल्लासाजी सराफ बेगदावाले, महेश्वर	१०१)
७. कु. श्री जीवनलता सुपुत्री श्री राजधरलालजी जैन मुनीम पा. सि. ऊन	५१)
८. श्रीमती लाड़कीबाई ध./प. स्व. श्री पन्नालालजी चौधरी, खण्डवा	५१)
योग	७०८

Checked

KKK

4/9/76

5/10/76